तीसरा काम

रजि० नं० बी ४४४८
लाअिसेन्स नं० १५

# हरिजनसेवक

दो आना

( संस्थापक : महात्मा गांधी )

भाग १७ | सम्पादक : मगनभाअी प्रभुदास देसाअी | अंक १८

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद–९

अहमदाबाद, शनिवार, ता० ४ जुलाअी, १९५३

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

## डॉ० श्यामाप्रसाद मुकर्जी

२३ जूनको बड़े सबेरे बंगालके प्रखर देशभक्त डॉ० श्यामाप्रसाद मुकर्जी अेकाअेक दुःखद स्थितिमें चल बसे। कुछ महीनोंसे वे अ० भा० जनसंघके नेताके रूपमें काश्मीर-सम्बन्धी सरकारी नीतिका कड़ा विरोध कर रहे थे। कुछ ही समय पहले अुन्होंने अिस कामके लिअे देशमें दौरा भी किया था, और लोगोंको अेक खास ढंगसे सत्याग्रह करनेकी हद तक जानेकी सलाह दी थी। अन्तमें वे स्वयं भी अुसमें कूद पड़े और काश्मीर सरकारकी ओरसे की गअी प्रवेशबन्दीको तोड़कर वे काश्मीर गये और वहां नजरबन्द हो गये। नजरबन्दीकी हालतमें ही वे बीमार हुअे और कुछ ही दिनकी बीमारीके बाद अस्पतालमें ही अुन्होंने अेकाअेक केवल ५२ सालकी अुम्रमें अपना शरीर छोड़ा। प्रतापी पिताके अेक प्रतापी पुत्रके जानेसे बंगालका और देशका अेक बड़ा विद्वान् शिक्षाशास्त्री और देशभक्त अुठ गया। अुनकी राजनीति अलग प्रकारकी थी, लेकिन अुसमें बहादुरीभरी स्वतंत्रताकी जो छटा दिखाअी देती थी, अुससे श्री श्यामाबाबूने शिक्षित वर्गमें अेक विशेष आकर्षणका स्थान पा लिया था। सन् १९४७ में देशके आजाद होने पर अिस देशभक्तने अुसकी पहली सरकारमें शामिल होकर देशके शासनकी जिम्मेदारीमें हाथ बंटानेका बीड़ा अुठाया और बड़ी योग्यतासे काम किया। वे अेक विरल वक्ता थे। कुछ मास पहले ही मुझे बम्बअीकी चौपाटी पर हिन्दीमें अुनका व्याख्यान सुननेका मौका मिला था। ये विद्वान् देशभक्त जिस धाराप्रवाह और सरल हिन्दीमें बोल रहे थे, अुसे देखकर अुनके देशप्रेम और हिन्दी भाषाकी शक्तिकी स्पष्ट प्रतीति हो रही थी। १९४७ के बाद देशकी राजनीति जैसे-जैसे आगे बढ़ी, वैसे-वैसे श्री श्यामाबाबूकी दृष्टि हिन्दूवादीकी-सी बनती गअी और अुन्होंने सरकारको छोड़कर अपना अलग विरोध-पक्ष खड़ा किया। काश्मीरके बारेमें लाख विरोध और मतभेद होने पर भी यदि भारत पर आक्रमण हुआ, तो वे अपने तमाम मतभेदोंको भूलकर मातृभूमिकी रक्षाके लिअे सरकारके साथ कंधेसे कंधा भिड़ाकर लड़ेंगे, श्री श्यामाबाबूकी अिस बुलन्द घोषणाको भारतके लोग सदा अुनकी राष्ट्रभक्तिके प्रमाणके रूपमें याद करेंगे। सरकारी नीतिका प्रामाणिक विरोध कभी राष्ट्रद्रोह नहीं हो सकता, राजनीतिका यह अुत्तम बोधपाठ श्री मुकर्जीकी हमें अमूल्य भेंट है। श्री श्यामाप्रसादजीका नाम भारतके देशभक्तोंकी नामावलीमें अंकित हो गया। अुनके जीवनकार्यकी सुगन्ध हमें सदा शुभ प्रेरणा देती रहे।

२८–६–'५३
(गुजरातीसे)

मगनभाअी देसाअी

## सज्जनताकी जीत निश्चित है

शामकी प्रार्थना-सभाके बाद विनोबाजीका आम दरबार लगता है। वहां किसीको रोक नहीं होती। गरीब-अमीर, विद्वान-अनपढ़ कोअी भी वहां आकर अपने दिलकी बातें विनोबाजीको सुना सकता है और मनकी शंकाओंका समाधान अुनसे करा सकता है। विश्रामपुरमें शामके समय अैसा ही दरबार लगा था। अेक भाअीने सवाल पूछा: "दुनियामें अकसर बुराअी भलाअीका विरोध करती है और अुसमें बुराअीकी ही जीत होती दिखाअी देती है।" यह सवाल अकसर सबको सताया करता है। खासकर जीवन-संग्राममें धीरज और निष्ठाके अभावमें हारनेवालोंके लिअे विनोबाजीका अुत्तर बड़ा ही मार्मिक था।

"बुराअी अगर भलाअीका विरोध नहीं करेगी, तो भलाअीकी कसौटी ही नहीं होगी। लेकिन अगर थोड़ा धीरज रखोगे, तो मालूम होगा कि भलाअीकी ही जीत होती है। भलाअीके पक्षमें सज्जनता होती है, अुसको मौका मिलना चाहिये। होता यह है कि दुर्जन लोग अपनेको संगठित करते हैं और सज्जन लोग नहीं करते हैं। अिसलिअे अुन्हें संगठित होना चाहिये। लेकिन अुसमें बीच बीचमें दुर्जनताका अुपयोग नहीं करना चाहिये। सज्जनोंका शस्त्र सज्जनता ही है।" "अीसाकी हार हुअी थी या जीत?" —प्रश्नकर्ता। विनोबाने फौरन जवाब दिया: "जीत"। फिर विनोबाजीने कहा, "वैसे देखा जाय तो अीसा मारा गया था, अिसलिअे अुसकी हार हुअी दिखाअी देती है। परन्तु अुसको मारनेवालोंको दुनिया भूल गअी और अीसाके नाम पर तरनेवाले लोग आज भी हैं।" प्रश्नकर्ताने बीचमें कहा, "लेकिन आज अीसाअी लोग अुसका अनुसरण कहां करते हैं?" विनोबाजीने कहा, "कौन क्रिश्चियन है? गांधीजी क्रिश्चियन थे, मैं हूं। आज भी अीसाके नाम पर क्या चलता है, यह जरा रांचीमें जाकर देखो। वहां दो हजार कुष्ठरोगियोंकी सेवा होती है और केवल अीसाके नाम पर अुसके लिअे अपना जीवन बर्बाद करनेवाले कअी लोग हैं। लेकिन अुसको मारनेवालेके नाम पर कुछ भी काम नहीं होता। फिर भी आप पंद्रह मिनटमें सफलता चाहेंगे तो नहीं मिलेगी। बीज बोनेके बाद अुगनेके लिअे कुछ समय तो लगता ही है। लेकिन हम तो आज सज्जनताकी बहुत सफलता देखते हैं। नहीं तो लोग हमें पत्थर मारते। परन्तु आज तो वे हमें भूमिदान दे रहे हैं। सज्जनता होते हुअे भी हार हो, अैसी अेक भी मिसाल मैंने आज तक नहीं देखी। जहां तक व्यक्तिके जीवनका ताल्लुक है, हमेशा सज्जनताकी ही जीत हुअी है। लेकिन सामाजिक तौर पर अुसकी जीत हो सकती है या नहीं, यह देखना है। जो दुर्जन होते हैं, खुद झूठ बोलते हैं, रिश्वत लेते हैं, वे भी यह नहीं चाहते कि अुनके बच्चोंको बुराअीकी तालीम मिले, बल्कि यही चाहते हैं कि बच्चोंको स्कूलमें 'सत्यं वद' ही पढ़ाया जाय। यानी दुर्जन भी

www.vinoba.in

यह चाहते हैं कि अुनके बच्चोंको सज्जनताकी तालीम मिले। अिससे साफ जाहिर होता है कि किसकी जीत होती है।

"परन्तु सामाजिक क्षेत्रमें सज्जनताकी जीत चाहते हों, तो अुसे संगठित करना चाहिये। भूदान-यज्ञके जरिये यही काम हो रहा है। पहले भी व्यक्तिगत तौर पर दान दिये जाते थे, पर अब दान संगठित हुआ है। सारे राष्ट्रमें दानका अेक कार्य शुरू करना और अुससे अेक मसला हल हो सकता है, अिस विश्वासके साथ आन्दोलन चलाना आज तक नहीं हुआ था। अिसलिअे दानकी शक्ति भी प्रगट नहीं हुअी थी। अभी बी० बी० सी० लंदनमें हमारे बारेमें अेक व्याख्यान हुआ था। अुसमें कहा गया कि हिन्दुस्तानमें अेक महान शांतिमय क्रांति हो रही है। जब हमें सिर्फ १२ लाख अेकड़ भूमि प्राप्त हुअी है, तब लोग अितना बोलते हैं तो ५ करोड़ अेकड़ हासिल होने पर क्या होगा? अुससे दुनियामें अेक महान नैतिक शक्ति पैदा होगी। अकसर मुझसे पूछा जाता है कि आप कोअी पार्टी क्यों नहीं बनाते? मैंने कहा कि मैं पार्ट नहीं हूं, पूर्ण हूं। हरअेक पार्टीमें जो सज्जन हैं, वे सब हमारे हैं। अगर मैं पार्टी बनाता, तो अुसमें बुरे मनुष्य भी आते और मुझे अुनको सहन करना पड़ता। लेकिन आज जो कांग्रेसवाले अेक दूसरेको गाली देते हैं, वे दोनों हमारा भूदानका काम करते हैं। अगर मैं पार्टी बनाता तो सिर्फ मेरे १०-५ चेले ही काम करते। आज मैं अकेला घूमता हुआ दिखाअी देता हूं, लेकिन आप देखेंगे कि कल हजारों लोग घूमेंगे।

"अगर मैं किसी दुर्जनसे लड़नेके लिअे अुसके समान ही अपने हाथोंमें तलवार लूं तो भी अुसके समान मैं बेरहमीसे नहीं मार सकूंगा। अिसलिअे अुस लड़ाअीमें अुसीकी जीत होगी। अुसीके औजारको लेकर हम कभी भी अुसे नहीं जीत सकते। अिसलिअे औजार भी अपने लायक चुनना चाहिये। सामाजिक क्षेत्रमें भी अपने ही औजारसे काम करो तो सज्जनताकी जीत निश्चित है। हमारा तो विश्वास है कि यह आन्दोलन ठीक ढंगसे चला, तो आज जिन्होंने नहीं दिया, वे कल खुद आकर दान देंगे। जो आज हमारा काम नहीं करते हैं, वे कल करनेवाले हैं। हमारा तो विश्वास है कि जो कम्युनिस्ट लोग आज अलग हैं, वे भी कल हमारा काम अच्छी तरहसे करनेवाले हैं। हमें सिर्फ धीरज रखकर और ठीक ढंगसे काम करते रहना चाहिये। हमारे काममें कोअी दोष नहीं आना चाहिये।"

२३-५-'५३ नि० दे०

## टिप्पणियां

### हरिजनोंके लिअे मकान

करीब बारह वर्षोंसे मैसूर राज्यकी नीति हरिजनोंके लिअे छोटे-छोटे, परन्तु स्वास्थ्यकर मकान मुहैया कर देनेकी रही है। प्रारम्भमें शायद राज्यकी ओरसे ही मकान बांध देनेकी नीति रही। बादमें हरअेक मकानके पीछे मददके रूपमें कुछ रकम देनेकी रही। आजकल अेक मकानके लिअे ३०० रुपयेकी मदद दी जाती है। अुसमें घरवालेको दिये हुअे नमूनेके मुताबिक मकान बनाना पड़ता है। अगर वह चाहे तो मुकर्रर दरसे अुसे दरवाजे-खिड़कियोंका लकड़ीका सामान और मंगलूरी कवेलू दिये जाते हैं। बहुतसे लोग अिस व्यवस्थाका लाभ अुठाते हैं। मकानोंके लिअे स्वास्थ्यकर जमीन सरकारकी ओरसे मुहैया कर दी जाती है। जहां सरकारकी अपनी मालिकीकी जमीन नहीं होती, वहां कानूनके मुताबिक दूसरोंसे लेकर अिन मकानोंके लिअे दी जाती है। यह व्यवस्था लगातार बारह वर्षोंसे चालू रहनेके कारण बहुतसे देहातोंमें हरिजनोंके लिअे साधारण ठीक मकान बन गये हैं।

सारे देशमें हरिजनोंके मकानोंकी समस्या जटिल है। प्रायः अुनके मकान गांवके अैसे कोनेमें होते हैं, जहां गन्दगी, नाले, अूंची-नीची जगह आदि असुविधायें होती हैं, जो स्वास्थ्यकी दृष्टिसे हानिकर हैं। कहीं-कहीं बड़े शहरोंमें भंगियोंके लिअे कुछ बस्तियां बनानेका काम चल रहा है। परन्तु देहातमें तो कोअी प्रबन्ध है ही नहीं। कुछ शहरोंमें म्युनिसिपल कमेटियों आदिकी ओरसे अैसे मकान बनवा देना अुपयुक्त होगा। पर सारे देशकी दृष्टिसे व्यापक पैमाने पर कोअी काम करना हो, तो मैसूर राज्य द्वारा अपनाअी हुअी आंशिक मददकी योजना अुपयुक्त दीखती है। कुछ मदद राज्यकी ओरसे मिल जाने पर घरवाला शरीरश्रमसे तथा अन्य मदद जुटाकर खुद मकान बनवा ले, यही रास्ता ठीक दीखता है। मकानोंके लिअे स्वास्थ्यकर जमीन भी मुहैया कर देना राज्यका कर्तव्य होना चाहिये।

१५-६-'५३ श्रीकृष्णदास जाजू

### "बेचारा घी"

वनस्पतिके पूंजीवादी कारखानोंको, जिनके प्रति पूज्य गांधीजीको बड़ी नफरत थी, हमारी गांधीवादी सरकार रोक नहीं सकी, अिस कारण घीमें मिलावटका सवाल पैदा हुआ। किसीने 'वनस्पति'को हलदीका रंग देनेका सुझाव रखा था। दूसरे अेक विशेषज्ञने कोअी और रंग सुझाया था। लेकिन ये सुझाव स्वीकार नहीं किये गये। अिस बारेमें श्री किशोरलालभाअी जैसे व्यक्तिको भी संदिग्ध होकर यह बात लिखनी पड़ी थी कि "वनस्पतिके व्यापारमें जिन लोगोंका स्वार्थ है, वे क्या सरकार पर दबाव डालते हैं?" आगे चलकर अुन्होंने कहा था कि "आखिरमें सहन तो पशु पालनेवालों और पशुओंको ही करना होगा। अुन दोनोंके लिअे अिस दुनियासे नष्ट हो जानेका समय आ रहा है। अैसा लगता है कि कंट्रोल और वनस्पति दोनों मिलकर यह परिस्थिति पैदा करनेमें लगे हैं।" श्री किशोरलाल मशरूवालाकी यह भविष्यवाणी सच साबित हो रही है।

यह मिलावट मिलावट करनेवालेको सजा या जुर्माना करनेसे ही रुकनेवाली नहीं है। यह तभी रुक सकती है जब मिलावट करनेकी परिस्थिति निर्माण करनेवालेको ही वास्तविक दोषी मानकर अुसका अिलाज किया जाय। वर्ना आजकी परिस्थितिमें वनस्पतिका व्यापार बढ़ेगा, सच्चे घीके व्यापारी सजा पायेंगे और सरकारको जुर्मानेसे प्राप्त होनेवाली आय बढ़ेगी। अिसके सिवा दूसरे किसी शुभ परिणामकी संभावना ही नहीं है।

(गुजरातीसे) पो० छ० शेठ

### युद्धका मुख्य कारण

श्री बरट्रेंड रसल अपने अेक लेख 'अगले अस्सी वर्ष' (सटरडे रिव्यू, अगस्त ९, १९५२) में कहते हैं:

"मेरी जिन्दगीका पूर्वार्ध (१८७२-१९१२) १९ वीं सदीमें प्रचलित आशावादके वातावरणमें और अुत्तरार्ध (१९१२-१९५२) विश्व-युद्धोंके युगमें बीता है। सामान्य तौर पर, **बड़े युद्ध राष्ट्रोंके बीच होनेवाली औद्योगिक स्पर्धाका फल हैं** (मोटा टाअिप हमारा है)। सम्पत्ति और सैनिक शक्ति दोनोंका आधार औद्योगिक विकास पर है, लेकिन ज्यादा सुधरा हुआ औद्योगिक कला-कौशल, यदि वह अधिकांश देशोंमें मौजूद हो, तो दुनिया जितना पचा सकती है अुससे कहीं अधिक अुत्पन्न करता है, और फलस्वरूप तीव्र स्पर्धाकी स्थिति पैदा करता है। यह स्पर्धा पुराने आर्थिक अुपायोंके जरिये नहीं, बल्कि लड़ाअीके जरिये चलायी जाती है। अगर दुनियाको शांति और स्थिरताकी स्थिति प्राप्त करना हो, तो अुसके लिअे यह जरूरी है कि औद्योगिक विकास और अुत्पादनका किसी-न-किसी तरह आन्तरराष्ट्रीय नियंत्रण किया जाय। कारण, हरअेक देशको अनियंत्रित औद्योगिक आजादी रही तो दुनियामें वे विनाशकारी युद्ध भी अवश्य जारी

www.vinoba.in

रहेंगे, जो अिस हतभाग्य शताब्दीका अभी तक अेक विशेष लक्षण रहे हैं।"

(अंग्रेजीसे) **वा० गो० दे०**

**श्रम-यज्ञ**

ता० १६ जूनसे पू० विनोबाजीने अपनी भूदान-यात्रामें अेक नवीन कार्यक्रम आरम्भ किया है। वह है श्रम-यज्ञका। रोज पड़ाव पर पहुंचकर जलपान करनेके बाद आधा घंटा जमीन तोड़नेका सामुदायिक कार्यक्रम चलता है। पिछले चार दिनोंसे क्रमशः ५०, ३०, ५२ और ४२ कुदालियां चलीं। ता० १८ जूनको घाघरा (रांची जिला) पड़ावके पास जो तीन दशमलव जमीन दानमें मिली हुअी थी अुसीको तोड़ने सारी पार्टी चली गअी। ५२ कुदालियोंसे ३३ दशमलव जमीन तोड़ डाली गअी। जमीन देनेवालेने फिर ३० दशमलवका दानपत्र दे दिया। गांवके लोगोंकी रायसे वह जमीन प्रार्थना-सभामें अुसी गांवके श्री मुनेश्वर मांझीको दे दी गअी। जमीन देनेवालेने अुस जमीनके लिअे बैल भी दिया।

रांची जिलेमें ता० १९ जून तक ४,७०५ दाताओं द्वारा कुल ६८,५२० अेकड़ ७९ दशमलवका दान मिला है। (श्री रामदेव ठाकुरके पत्र परसे)

सेवाग्राम, वर्धा **कृष्णराज**

दफ्तर-मंत्री, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ

## कुष्ठ-कामके संचालकोंकी तालीम

महारोगी-सेवा-मण्डल, वर्धाने दत्तपुर कुष्ठधाममें गांधी-स्मारक-निधिके आश्रयमें साधारण कार्यकर्ताओंके लिअे अेक तालीम केन्द्र शुरू किया है। अुन्हें अैसी तालीम दी जायगी कि वे कुष्ठ-रोगियोंकी वस्तीका संगठन और संचालन कर सकें। तालीम पाये हुअे कार्यकर्ता संचालनका काम जहां प्राप्त होगी वहां डॉक्टरोंकी सहायतासे करेंगे और जहां यह संभव न होगा वहां निर्धारित प्रणालीके अनुसार करेंगे। अिस वर्गमें विद्यार्थियोंके तीसरे दलकी तालीम १ नवम्बर, १९५३ से शुरू होगी। प्रवेश चाहनेवाले विद्यार्थी अपनी अर्जियां भेजें।

**शिक्षा-संबंधी योग्यता** — प्रवेश प्राप्त करनेके लिअे अुम्मीदवारको कम-से-कम अिन्टर साअिन्स, अिन्टर आर्ट्स या भारतकी किसी मान्य डॉक्टरी संस्थाका स्नातक होना चाहिये। मध्यप्रदेशके ग्रामीण चिकित्सकों (Rural Medical Practitioners) को भी भरती किया जायगा। महारोगी-सेवा-मण्डलकी प्रबन्धकारिणी समिति योग्य अुम्मीदवारोंके लिअे अिस नियमको छोड़ भी सकेगी।

**अुम्र** — २१ और ४० के बीचमें होनी चाहिये। विशेष स्थितिमें अिस नियममें अपवाद हो सकेगा।

**दूसरी योग्यताअें** — अुम्मीदवारोंमें मानव-सेवाकी भावना, सचाअी और अिस कामकी लगन होनी चाहिये। स्त्री-अुम्मीदवारोंको भी प्रवेश मिल सकेगा। लेकिन सब अुम्मीदवारोंको शरीरसे स्वस्थ होना चाहिये और अुनमें नअी जगहमें अिस कामको शुरू करनेकी क्षमता होनी चाहिये।

**तालीमका समय** — १२ महीनेका होगा।

**शिक्षाका माध्यम** — डॉक्टरी विषय अंग्रेजी माध्यम द्वारा पढ़ाये जायंगे। डॉक्टरीसे सम्बन्ध न रखनेवाले विषय हिन्दी या मराठी भाषामें पढ़ाये जायंगे।

**रहने-खानेकी व्यवस्था, छात्रवृत्तियां आदि** — अभी १० से ज्यादा अुम्मीदवार भरती नहीं किये जायंगे। तालीमके लिअे चुने गये हर अुम्मीदवारको अुसकी व्यक्तिगत जरूरतके मुताबिक ५० से १०० रुपये तककी छात्रवृत्ति १२ महीने तक दी जायगी। रहनेकी व्यवस्था मुफ्त की जायगी। खानेका खर्च विद्यार्थियोंको ही देना होगा।

तालीमके बाद अुम्मीदवारको योग्यताके अनुसार १५० रु० तक माहवार पर ५ साल तक अपनी सेवायें देनेका वचन देना होगा।

अर्जियां ३१ जुलाअी, १९५३ तक आ जानी चाहियें। अिसलिअे ज्यादा जानकारीके लिअे तुरन्त नीचे लिखे पते पर पत्रव्यवहार करें।

दत्तपुर कुष्ठधाम, **मनोहर दिवाण**
पो० नालवाड़ी, वर्धा (म० प्र०) मंत्री
महारोगी-सेवा-मंडल

## हिन्दुस्तानी तालीमी संघके नये प्रकाशन

**जीवन-शिक्षाका प्रारम्भ** (पूर्व-बुनियादी शिक्षाकी योजना और प्रत्यक्ष काम) : श्रीमती शान्ता नारूलकरने सेवाग्राममें पूर्व-बुनियादी और प्रौढ़शिक्षाका जो प्रत्यक्ष काम किया, अुसके सिद्धान्तों और प्रत्यक्ष अनुभवके बारेमें हिन्दुस्तानी तालीमी संघने यह पुस्तक प्रकाशित की है। अेक पुस्तक गत वर्ष 'प्रौढ़शिक्षाका अुद्देश्य' नामसे प्रकाशित हो चुकी है।

प्रस्तुत पुस्तकमें विशेषतः पूर्व-बुनियादी शिक्षाके सिद्धान्तों और प्रत्यक्ष अनुभवका चित्रण किया गया है। अिस सम्बन्धके १६ चित्र भी आर्ट पेपर पर दिये गये हैं। मूल्य १–४–०; पृष्ठ – १२८।

**सेवाग्राम — गांधीलोक :** सन् १९४९ में अमेरिकाके अेक दम्पती भारत-भ्रमणके लिअे आये थे। अुन्होंने काफी समय सेवा-ग्राममें रहकर नयी तालीम और अन्य रचनात्मक कार्यक्रमोंका अध्ययन किया था। अिसीका वर्णन अुन्होंने "अिण्डिया अफॉयर" नामक पुस्तकमें किया है। प्रस्तुत पुस्तिका अिसी पुस्तकके अेक अध्यायका अनुवाद है, जिसमें अुन्होंने सेवाग्रामके अपने अनुभवों और यहांकी विचारधाराका निष्पक्ष दृष्टिसे सजीव वर्णन किया है।

पुस्तक क्राअुन साअिज़में ४६ पृष्ठोंमें छपी है। मूल्य ५ आने।

**'नअी तालीम' मासिक पत्रिका :** यह हिन्दुस्तानी तालीमी संघकी मुखपत्रिका है। अितना ही नहीं, यह सारे भारतवर्ष और विदेशोंमें बुनियादी तालीमका काम करनेवाले कार्यकर्ताओंके लिअे भी अेक सहायक पत्रिका है। हम चाहते हैं कि नयी तालीमके सब कार्यकर्ता अिसे अपनी पत्रिका समझें; जो भी विशेष अनुभव अुन्हें हों या वे जो प्रयोग करें, अुनका विवरण अिस पत्रिकामें प्रकाशनार्थ भेजें, ताकि अुनके अनुभवोंका लाभ दूसरे कार्यकर्ताओंको भी मिल सके।

'नअी तालीम' का अुर्दू संस्करण अब शीघ्र ही जामिया मिलिया, दिल्लीसे डॉ० सैयद अंसारी साहब प्रकाशित करेंगे। अिसके बारेमें सीधे अुन्हींसे पत्रव्यवहार किया जा सकता है।

सेवाग्राम **प्रबन्धक**
प्रकाशन-विभाग
हिन्दुस्तानी तालीमी संघ


**स्मरण-यात्रा**

[बचपनके कुछ संस्मरण]

**काका कालेलकर**

कीमत ३–८–० डाकखर्च ०–११–०

**रचनात्मक कार्यक्रम**

[दूसरा संस्करण]

लेखक : **गांधीजी**

अंनु० **काशिनाथ त्रिवेदी**

कीमत ०–६–० डाकखर्च ०–२–०

**नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद – ९**


www.vinoba.in

# हरिजनसेवक

४ जुलाअी १९५३


## तीसरा काम

ता० २०-६-'५३ के 'हरिजन' में छपे 'शंकाका कोअी कारण नहीं है' लेखमें भूदान-यज्ञकी चर्चा करते हुअे मैंने संक्षेपमें "गांधी-युगमें हमारे देशमें आरम्भ हुअी शांतिपूर्ण क्रांतिकी तिहरी प्रक्रिया" का जिक्र किया था। और मैंने अुसका अिस तरह वर्णन किया था:

१. स्वर्गीय सरदार पटेलने देशी राजाओंको राष्ट्रके व्यापक हितमें और अुसके गौरवको ज्यादा बढ़ानेके लिअे अपने अधिकार छोड़नेके लिअे राजी किया और विलीनीकरणकी अेक विशेष संधिके जरिये अुनके राज्योंको भारतके साथ मिलाकर अेक कर दिया।

२. श्री विनोबाने जमींदारी और निष्क्रिय जमींदारीकी समस्याको हल करनेके लिअे भूदान-यज्ञका अुपाय निकाला।

३. और अुस चर्चामें मैंने कहा था कि अिसके बाद अब मुट्ठीभर लोगोंके हाथमें केन्द्रित पूंजीका और अुस पूंजीके जरिये होनेवाले वैयक्तिक मुनाफेका सवाल हल करना बाकी रह जाता है; अिस अनिष्ट परिस्थितिके सुधारके लिअे भी हमें कोअी शांतिपूर्ण हल खोजना है।

यह तीसरा काम कैसे पूरा किया जाय, यह हमारे सामने खड़े अनेक मुख्य प्रश्नोंमें से अेक अत्यन्त महत्त्वका प्रश्न है। लेकिन यह प्रश्न नया नहीं है। यह पश्चिमकी औद्योगिक क्रांतिमें से पैदा हुआ है और आज अुसकी चिन्ताका मुख्य विषय बन गया है।

अिस शताब्दीके चौथे दशकमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके कुछ सोशलिस्ट मित्रोंने हमारे सामने यह बात रखनेकी कोशिश की थी कि हमारी गुलामीका कारण पूंजीवाद है और हमें समाजवादके आधार पर संगठित होकर विदेशी हुकूमतसे लड़ना चाहिये। यह प्रश्न तब समयसे पहले अुठाया गया था; वह मानो पश्चिमी राष्ट्रोंकी नकल करनेके लिअे ही अुठाया गया था, जो स्वतंत्र थे और अपने-अपने देशमें समाजवादी ढंग पर पूंजीवादी व्यवस्थाओंसे लड़ रहे थे। हमारी स्वतंत्रताकी लड़ाअीके दिनोंमें, जिसमें देशके सारे वर्गोंके लोग — तथाकथित पूंजीवादी भी — दिलचस्पी रखते थे और भाग लेते थे, यह प्रश्न निरर्थक और अप्रस्तुत था। अिसलिअे वह हमें अपील नहीं कर सका। अुन दिनों अिस प्रश्नकी चर्चा किसी विचारधाराकी शास्त्रीय चर्चा ही अधिक मालूम होती थी। लेकिन आज वह जमाना नहीं रहा। अब हम अेक राष्ट्रके नाते स्वतंत्र हैं और विदेशी शासकोंसे जो अर्थ-रचना और समाज-व्यवस्था हमें विरासतमें मिली, अुसका पुनर्निर्माण करना चाहते हैं। अैसे समय कुछ खानगी लोगोंके हाथमें पूंजीके अेकत्रीकरणका प्रश्न, जमींदारीके प्रश्नकी तरह, बड़ा महत्त्वपूर्ण बन गया है और अपने हलका तकाजा करता है।

लेकिन मैं यहां अितना कह दूं कि यह प्रश्न हमारी निगाहसे बाहर नहीं था और अुस अर्थमें यह नया नहीं है। मेरा मतलब अितना ही है कि पूंजीवादकी बुराअीने — स्वतंत्रताकी लड़ाअीके दिनोंमें वह किसी भी रूपमें क्यों न रही हो, अुसका प्रश्न अुन दिनों अप्रस्तुत और बिलकुल गौण था — आज सबसे ज्यादा महत्त्व ग्रहण कर लिया है; और आज जबकि हम भारतके पुनर्निर्माणका विचार कर रहे और योजना बना रहे हैं, तब वह अेक मुख्य ध्यान देने लायक बात बन गअी है। आज अुसका अपना महत्त्व और तकाजा हो गया है।

लेकिन अेक बात हमें जरूर याद रखनी चाहिये। वह यह कि बड़े पैमानेके अुद्योग-धन्धोंमें खूब प्रगति करनेवाले और शहरी सभ्यताको बहुत ज्यादा प्रधानता देनेवाले पश्चिममें पूंजीवाद बुराअी नंबर १ हो गया है, जब कि हमारे देशमें — जो मुख्यतः ग्रामप्रधान और खेतीप्रधान है — वह दूसरी कुछ बुराअियोंमें से अेक है। और मैं कह सकता हूं कि वह हमारे पाश्चात्य शासकोंसे हमें विरासतके रूपमें मिली है। हमारे बम्बअी, कलकत्ता, मद्रास जैसे कुछ बड़े औद्योगिक शहरोंके यंत्रोद्योगोंमें यह बुराअी देखनेको मिलती है। जो भी हो, यह बुराअी बढ़ रही है और अिस हकीकतसे वह और ज्यादा ताकतवर बन रही है कि हमारे आजके योजनाकार भारतकी अर्थ-रचनाको बड़े अुद्योगों पर और ज्यादा अवलंबित बनाना चाहते हैं। जैसा कि पार्लमेन्टमें पंचवर्षीय योजना पर बहस शुरू करते हुअे हमारे प्रधान मंत्रीने कहा था, "असलमें तो हम, जहां तक हमसे हो सकता है, अुस औद्योगिक क्रांतिकी दिशामें बढ़नेकी कोशिश कर रहे हैं, जो पश्चिमके देशोंमें बरसों पहले हुअी थी और जिसने करीब अेक सदी या अुससे कुछ ही अधिक समयमें बड़ी-बड़ी तबदीलियां पैदा कर दी थीं।" ('हरिजनसेवक' १७-१-'५३, लेख — 'हमारी औद्योगिक क्रांति'।) अिसलिअे आज पश्चिम औद्योगिक क्रांतिके कारण जो कुछ कष्ट भोग रहा है, वही हम भी भोगने जा रहे हैं। तो हमारे लिअे यह जरूरी हो जाता है कि हम अिस तरफ ध्यान दें और अिससे बचनेका कोअी रास्ता निकालें। अिस बीमारीका शिकार पश्चिम हमें अिसका कोअी तैयार अिलाज नहीं दे सकता। पश्चिमके लोग खुद अंधेरेमें रास्ता खोज रहे हैं। अिसलिअे अगर हम अुनका अनुकरण करेंगे, तो वह अंधेके पीछे अंधेके चलने जैसा होगा।

जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, यह प्रश्न हमारे लिअे नया नहीं है। अभी कुछ ही दिन पहले लोकशाही पर बोलते हुअे श्री कृपलानीने अिसे नीचेके शब्दोंमें व्यक्त किया था:

> "अिसका मूल कारण औद्योगिक क्रांति द्वारा पैदा की गअी सम्पत्ति और अवसरकी असमानता है, जिसका आधार खानगी लोगोंके हाथमें रहनेवाले केन्द्रित यंत्रोद्योगों पर है।"

और अुन्होंने अिसका अिलाज भी बताया। अुन्होंने कहा:

> "अिसका अेकमात्र संभव अिलाज यह है कि समाजके कल्याणके लिअे सहकारी ढंग पर किये जानेवाले व्यापार और विकेन्द्रित अुद्योगोंके जरिये बड़े व्यवसाय-वाणिज्यको तोड़ दिया जाय। . . . सत्ताका भी विकेन्द्रीकरण होना चाहिये, जिससे स्थानीय स्वायत्त शासनकी अिकाअियोंको पुनर्जीवन प्राप्त होगा और अुनकी शक्ति बढ़ेगी।"

मुख्य बात यह है कि यह सब कैसे किया जाय? बड़े व्यवसाय-वाणिज्यको तोड़ने और सत्ताके विकेन्द्रीकरणके ठोस रास्ते और साधन कौनसे हैं? जैसा कि मैंने शुरूमें कहा, यह तीसरा काम है जिस पर जन-नेताओंको ध्यान देना चाहिये और अुसे सिद्ध करनेका कोअी ठोस रास्ता खोज निकालना चाहिये।

अेक दूसरे सम्बन्धमें भी यही प्रश्न अुठता है। जिन्होंने 'हरिजन' के कालमोंमें श्री खंडुभाअी देसाअी और श्री म० प्र० ति० आचार्यकी मजदूर और मजदूर-आन्दोलन सम्बन्धी चर्चा* को ध्यानसे पढ़ा होगा, अुनके खयालमें यह बात आअी होगी कि अुससे भी यही प्रश्न पैदा होता है — अर्थात् हम आजकी पैसेकी या नकद अर्थ-रचनाकी जड़में रहे मालिक-मजदूरके द्वैतको मिटानेके लिअे गांधीजीके ट्रस्टीशिपके सिद्धान्त पर कैसे अमल करेंगे? जैसा

* देखिये 'हरिजनसेवक', ३०-५-'५३: 'गांधीजीकी मजदूर-नीति'; 'हरिजनसेवक', १३-६-'५३: 'पूंजीवाद और ट्रेड-यूनियनवाद'; और 'हरिजनसेवक', २७-६-'५३: 'गांधीजीका मजदूर-आन्दोलन'।

www.vinoba.in

कि श्री आचार्यने मुझे लिखे अेक पत्रमें बताया है, "अगर मालिक ट्रस्टी बन जाता है, तो वह (मान लीजिये) मैनेजरके रूपमें अुत्पादक परिश्रम करनेवाला अेक मजदूर ही होगा। तब वर्गोंको जन्म देनेवाली मजदूरी-प्रथाको मिट जाना होगा। वर्गोंके रूपमें समाजका स्पष्ट विभाजन मजदूरी-प्रथाके कारण ही पैदा होता है; यह प्रथा गृह-युद्धको जन्म देनेवाली है, क्योंकि जो मजदूरी देते हैं, अुन्हें मजदूरी पानेवाले मजदूरोंसे मुनाफा कमाना ही पड़ता है। यह मजदूरी और मुनाफेकी प्रथा ही मालिकोंको मुनाफाखोर बनाती है। जिस साधनका वे अुपयोग करते हैं, अुसके कारण वे मुनाफाखोरीसे बच ही नहीं सकते। मालिकीका अधिकार और मजदूरीकी प्रथा मालिकको मजदूरोंका शोषण करनेका मौका देती है। सवाल यह नहीं है कि कारखानों और फेक्टरियों पर किसका अधिकार है, बल्कि यह है कि तैयार माल पर किसका अधिकार है और अुसका बंटवारा कौन करता है।"

और आजकी पूंजीवादी व्यवस्थामें मालिक ही पैसे और लेन-देनके तंत्रके जरिये माल पर अधिकार रखता है और अुसका बंटवारा भी करता है। अिसलिअे आज हमारे सामने जरूरी काम यह है कि हम अेक निश्चित नीति बनायें और अुसके अनुसार आर्थिक और दूसरी योजनायें पूरी करनेके लिअे कारगर व ठोस कदम अुठायें तथा ट्रस्टीशिपके सिद्धान्तको प्रत्यक्ष व्यवहारका रूप देनेकी योजना तैयार करें। यह हमारे सामने पड़ा तीसरा काम है। अिस पर मैं अगले अंकमें ज्यादा चर्चा करूंगा।

२५–६–'५३ मगनभाअी देसाअी

(अंग्रेजीसे)

## मशीन और बेकारी

डाकखानेमें काम करनेवाले अेक भाअी लखनअूसे लिखते हैं कि:

> "सरकार द्वारा नियुक्त तीन विदेशी अफसर आजकल हमारे देशके बड़े-बड़े नगरोंका दौरा कर रहे हैं, जहां वे डाकखानोंके कामके मशीनीकरणकी सम्भावनाओं पर अपनी सिफारिशें देंगे। यह समझमें नहीं आता कि अन्य बहुतसी जरूरी समस्याओंके होते हुअे भी अैसे फिजूलखर्चीके काम हाथमें लेनेसे देशका कौनसा हित होता है?
>
> "ये अफसर लगभग छः महीने देशमें रहेंगे। अिनके वेतन, भत्ते तथा सफरखर्च अित्यादिमें जो काफी व्यय होगा वह तो होगा ही। अुनकी सिफारिशोंके अनुसार जो मशीनें मंगाअी जायेंगी, वे भी निश्चित रूपसे विदेशी और काफी मूल्यवान होंगी। अैसे समय जब कि राष्ट्रीय पैसेकी बचतकी जरूरत है, अिस प्रकारकी फिजूलखर्चीसे कैसे काम चल सकता है?
>
> "फिर अुससे अुलटे हानि होनेकी ही सम्भावना अधिक है। डाकखानोंका काम मशीनोंसे होने लगेगा तो हमारे जो बहुतसे भाअी डाकखानोंमें काम करते हैं, अुनकी रोजी चली जायगी और वे अैसे बेकारीके समयमें दाने-दानेको तरसने लगेंगे। जब हमारे देशमें काम करनेवाले आदमी बहुत ज्यादा तादादमें मिल सकते हैं, तो अुनके बजाय कीमती मशीनोंका अिस्तेमाल करके बेकारी बढ़ानेमें कहांकी बुद्धिमत्ता है?"

मशीन और अुसको खरीदनेके लिअे पैसा — अिनके जोरसे आदमीको कामसे हटानेका ढंग शायद अुन देशोंमें फायदेमंद हो, जहां काम करनेके लिअे आबादी कम हो और जरूरी काम ज्यादा। लेकिन वहां भी अिससे पूंजीवादकी बीमारी पैदा होती है, और व्यापारके लिअे बाजार तथा साम्राज्यकी जरूरत पैदा होती है। परन्तु हमारे जैसे देशमें, जहां असंख्य लोग बेकारीके कारण भूखों मर रहे हैं, जड़ मशीनसे काम लेना और जीवित आदमीको कामसे हटाना न सिर्फ क्रूरता होगी, बल्कि बेवकूफी भी कही जायेगी।

अिसी तरह आज देशी बीड़ी बनानेके काममें भी सोचा जा रहा है। करीब करीब छः लाख लोगोंको अुससे काम मिलता है।* और तीन लाखको हर साल मौसममें दो महीनेका काम मिलता है। बीड़ीमें लगनेवाली तंबाकूसे केन्द्रीय सरकारको ११ करोड़की जकात मिलती है। अंदाजन् कहा जाता है कि रोज ५० करोड़ बीड़ियां हाथसे बनती होंगी। यह काम घरेलू पैमाने पर गांवोंमें चलता है; अुसके लिअे कोअी पूंजी लगानेकी जरूरत नहीं होती; गृह-अुद्योगके तौर पर फुरसतके समय किया जाता है।

अिस अुद्योगमें ६० करोड़ रुपये लगे हैं और २०० बड़े कारखाने हैं, जिनके मालिक अिस धंधे पर ७५ फीसदी काबू रखते हैं — यानी नफा खाते हैं। अब बीड़ीके अिन बड़े कारखानेदारोंमें से कअी लोग सोच रहे हैं कि बीड़ी बनानेकी मशीन यदि निकल आये, तो आदमियोंकी झंझटसे बच जायें और नफा भी ज्यादा मिलने लगे। दो मशीनें बनी भी हैं। अिनसे हर रोज १०–१५ हजार बीड़ी बनेंगी अैसा अंदाज है। यानी ये मशीनें रोजाना करीब १२ आदमियोंका काम कर देंगी। आगे अुनमें सुधार भी हो सकता है; तब और ज्यादा लोगोंको वे बेकार बना सकेंगी। पूंजीवाले अपनी पूंजी लगाकर आदमीको बेकार बना कर भूखों मरनेकी स्वतंत्रता दे सकेंगे और खुद नफा खायेंगे।

छोटे रूपमें, अिस परसे हम अपने कल-कारखानोंकी सारी कहानी समझ लें। हमारे कअी ग्राम और गृह-अुद्योग अिस तरह मर चुके हैं और जो बाकी बच रहे हैं वे भी मर रहे हैं। सवाल यह है कि आखिर किया क्या जाय?

बीड़ीके बारेमें पार्लमेन्टमें चर्चा निकली, तो अुसके जवाबमें वाणिज्य-व्यवसाय विभागके अुपमंत्रीने कहा कि, "सरकार अुद्योग-धंधोंके किसी क्षेत्रमें अैसे यंत्रीकरणका बुनियादी तौर पर विरोध करती है, जो बड़े पैमाने पर बेकारीको बढ़ाता है।" (अेफ० पी० जे०, नअी दिल्ली, १४–५–'५३) डाक-विभागके मंत्रीको भी अैसा जाहिर करना चाहिये। और सरकारको अपनी नीतिके तौर पर यह जाहिर करना चाहिये कि जितने भी घरेलू ग्रामोद्योग आज बचे हुअे हैं और बच सकते हैं, अुनको संभालने और अुनकी सलामतीके लिअे वह बराबर सावधान रहेगी और दूसरे जितने भी ग्रामोद्योग चलने चाहियें अुनके लिअे कोशिश करेगी। क्योंकि बेकारी दूर करना ही आज हमारा मुख्य काम है। जो नीति अिसे नहीं मानती और नहीं अपनाती, अुसे आज तो बेकार ही मानना पड़ेगा।

१८–६–'५३ मगनभाअी देसाअी

* ये आंकड़े अे० आअी० सी० सी० के 'अिकानॉमिक रिव्यू', १५ मअी, १९५३ से लिये गये हैं।


हमारा नया प्रकाशन

**विवेक और साधना**

लेखक: केदारनाथ

संपादक

किशोरलाल मशरूवाला : रमणीकलाल मोदी

कीमत ४–०–० डाकखर्च ०–१२–०

नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद – ९


www.vinoba.in

## विज्ञानके लिअे नैतिक समस्या

प्रोफे० अे० व्ही० हिलने ब्रिटिश अेसोसियेशनके सामने अपने अध्यक्षीय भाषणमें आजके वैज्ञानिकके सामने खड़ी नैतिक दुविधाके बारेमें जो विचार व्यक्त किये, अुनका अधिकांश नवम्बर, १९५२ के 'दि बुलेटिन ऑफ दि अेटोमिक साअिंटिस्ट्स' नामक पत्रने अुद्धृत किया है। अुस भाषणका सार 'लन्दन टाअिम्स' की शिक्षा सम्बन्धी पूर्तिमें दिया गया था। पत्रने अुस भाषण पर अेक अग्रलेख लिखा, जिसके अन्तमें अुसने आज वैज्ञानिक अध्ययनके सामने खड़े बड़े गंभीर खतरेकी ओर अिशारा किया है:

"प्रयोगशालाओं और बाहरी क्षेत्रोंमें काम करनेवाले सभी 'सामान्य वैज्ञानिक' अतीतमें मानवताके विचारोंके प्रति अकसर काफी लापरवाह रहे हैं या अपने सीमित दृष्टिकोणके औचित्यके बारेमें अुन्होंने बड़ा दुराग्रहपूर्ण विश्वास बताया है। वैज्ञानिक तालीममें रहा यह बुनियादी खतरा है, जिसके विषयमें स्कूल, शिल्पविज्ञानकी शिक्षा देनेवाले कॉलेज और विश्वविद्यालय दिनोंदिन ज्यादा सावधान होते जा रहे हैं। लेकिन अिस वृत्ति या विश्वासको सुधारनेके लिअे आज तक अुनमें से अधिकांशने जितनी चतुराअी और दृढ़ता दिखाअी है अुससे कहीं ज्यादा चतुराअी और दृढ़ताकी जरूरत होगी।"

अूपर जिस डर और खतरेका अुल्लेख किया गया है, वह हमारे देशमें भी मौजूद है। जैसा कि प्रो० हिलने कहा, सब लोग यह मानेंगे कि "वैज्ञानिक ज्ञानका अुपयोग करके मानवकी स्थितिको सुधारनेका प्रयत्न बड़े-से-बड़े अुदात्त साहसोंमें से अेक है; लेकिन यह विश्वास कि समाजको नैतिक बुनियाद पर खड़ा किये बिना केवल वैज्ञानिक पद्धतियोंसे ही यह ध्येय सिद्ध किया जा सकता है, अेक खतरनाक भ्रम है।" दुर्भाग्यकी बात है कि औसत वैज्ञानिक अिस 'खतरनाक भ्रमको' आम तौर पर सच्चा विश्वास मानते हैं। वे यह भूल जाते हैं कि विज्ञान मानव-ज्ञानकी अेक शाखा ही है और जिसे छानबीनकी वृत्ति या वैज्ञानिक पद्धति कहा जाता है, वह कोअी प्राकृतिक विज्ञानोंका ही विशेष अधिकार नहीं है; और हमारे पास विज्ञान ही अेकमात्र अैसी विद्या नहीं है, जो दूसरी विद्याओंको बेकार या गैरजरूरी बनाकर अुनकी जगह ले ले। विद्वान प्रोफेसर अिस खतरेको अच्छी तरह जानते हैं, जिसकी अुन्होंने अपने भाषणमें विस्तारसे चर्चा की है। अुसमें से नीचेके हिस्से मैं यहां अुद्धृत करूं, तो पाठकोंको वे दिलचस्प मालूम होंगे:

"आज जब कि विज्ञानका सार्वजनिक महत्त्व और अुसकी व्यापक प्रशंसा कुछ लोगोंके दिमाग फिरा सकती है, वैज्ञानिकोंको यह समझना चाहिये कि विज्ञानकी प्रतिष्ठा अुनकी व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं है, बल्कि अेक अैसा ट्रस्ट है जिसे अपने अुत्तराधिकारियों तक शुद्ध रूपमें पहुंचाना अुनका कर्तव्य है।... लेकिन दूसरे विषयों—अुदाहरणके लिअे, राजनीति या धर्मके सम्बन्धमें की जानेवाली घोषणाओंके प्रति लोगोंको आकर्षित करनेके प्रलोभनके रूपमें विज्ञानकी सामान्य प्रतिष्ठाका अुपयोग करना विज्ञान और जनता दोनोंकी कुसेवा करना है। अैसी बातोंके बारेमें मैं जो कुछ पसन्द करता हूं, अुसे कहनेके लिअे अेक नागरिकके नाते मुझे भी अुतना ही अधिकार है जितना किसी दूसरे नागरिकको हो सकता है। लेकिन अुनकी चर्चा करते समय विज्ञानका प्रतिनिधि होनेका ढोंग रचनेका मुझे कोअी अधिकार नहीं है।..."

अुन्होंने अपने श्रोताओंसे यह भी कहा कि:

"ज्यादातर बातोंमें वैज्ञानिक बिलकुल सामान्य लोग ही हैं। अपने विशिष्ट वैज्ञानिक काममें अुन्होंने किसी भी वस्तुकी छानबीन या परीक्षा करनेकी आदतका विकास कर लिया है। लेकिन यह आदत अुन्हें दुनियाकी मामूली बातोंमें मनो-राज्यमें विचरण करनेसे या कभी-कभी, जब अुनकी भावनायें या पूर्वग्रह जोरोंसे आन्दोलित हो अुठते हैं, गलत और झूठी बातें कहनेसे नहीं बचाती।"

अिसलिअे अुनका यह निश्चित मत था कि दूसरे सारे भले नागरिकोंकी तरह वैज्ञानिक भी अपने आपको नैतिक प्रश्नोंके विचारसे मुक्त नहीं मान सकते। अुनकी रायमें दूसरे भले नागरिकोंकी तरह वैज्ञानिकोंको भी सचाअी, अीमानदारी, साहस और सद्भावनाका खयाल रखना ही चाहिये।

तब विज्ञानको विज्ञानके नाते आज कौनसी विशेष या अनोखी नैतिक दुविधाका सामना करना पड़ता है? यह प्रो० हिलके भाषणका मुख्य विषय था। अुसका सार यह है कि विज्ञानकी दुविधा अुस ज्ञानको प्रकाशमें लानेके अुसके कामसे पैदा होती है, जिसका मानव-समाज पर अच्छा या बुरा असर होता है:

"अधिक वैज्ञानिक और टेकनिकल प्रगतिने अनपेक्षित खतरों और कठिनाअियोंको जन्म दिया है। जन्तुशास्त्र और बीमारियोंको रोकनेके हमारे आजके ज्ञानके अभावमें विशाल सेनायें लड़ाअीके मैदानोंमें कभी नहीं रखी जा सकती थीं और अभी हालके पैमाने पर स्थलयुद्ध करना असम्भव हो जाता। अिसलिअे क्या बीसवीं सदीके युद्धोंका दोष औषधि-विज्ञानको देना होगा? जन्तुनाशक दवाओंका बिना सोचे-समझे किया जानेवाला अुपयोग प्रकृतिका सन्तुलन बिगाड़कर लाभके बजाय तेजीसे हानि ही ज्यादा करेगा। रेडियोका अुपयोग झूठ और अव्यवस्था फैलानेके लिअे भी किया जा सकता है और सत्य व सद्भावनाके प्रसारके लिअे भी हो सकता है। अत्यन्त सूक्ष्म जन्तुओंसे सम्बन्ध रखनेवाले विज्ञानमें जो प्रगति हुअी है, वह कअी तरहसे लाभप्रद है; लेकिन भविष्यमें अुसका प्रयोग जन्तुयुद्धके लिअे भी किया जा सकता है, जिसके नतीजोंके बारेमें आज कुछ कहना असम्भव है।...

"दुनियाके बहुतसे हिस्सोंमें सार्वजनिक स्वास्थ्यकी प्रगति तथा सफाअी और स्वच्छतामें सुधार होने, महामारियोंसे बचनेके साधन निकलने, जन्तुओंसे पैदा होनेवाली बीमारियोंसे लड़ने, बच्चोंकी मृत्युसंख्या घटने और जीवनकी अवधि बढ़नेसे जनसंख्या बहुत ज्यादा बढ़ गअी है। अिसकी वजहसे कुदरती साधन-सामग्रीकी तंगी हो गअी है, खासकर अन्नकी।

"अिस सूचीको बढ़ानेकी जरूरत नहीं, क्योंकि सभी जानते हैं कि मनुष्य-जातिके लिअे पैदा किये जानेवाले हर लाभके साथ अुसके खतरे भी रहते ही हैं। ये खतरे या तो अनपेक्षित परिणामोंके रूपमें सामने आते हैं या जान-बूझकर अुस लाभका दुरुपयोग करनेसे पैदा होते हैं।"

प्रो० हिल यह स्वीकार करते हैं कि "अिस पहेलीका कोअी आसान अुत्तर नहीं दिखाअी देता।" और यह भी कहते हैं कि अिसके दो अंतिम सीमाको पहुंचनेवाले अुत्तर हैं:

"न सिर्फ प्राकृतिक जगतके, बल्कि हर प्रकारके ज्ञानका अच्छा और बुरा दोनों तरहका अुपयोग किया जा सकता है। और हर युगमें अैसे लोग होते ही हैं, जो यह सोचते हैं कि अुसके फलके अुपयोगका निषेध होना चाहिये।... दूसरे लोग अिसके विरुद्ध राय रखते हैं और कहते हैं कि विज्ञानकी अधिक-से-अधिक प्रगति और अुसके अुपयोगसे ही मनुष्य समृद्ध और सुखी हो सकते हैं। ये दोनों अंतिम सीमाको छूनेवाले मत मुझे बिलकुल गलत मालूम होते हैं; यद्यपि दूसरा मत ज्यादा खतरनाक है, क्योंकि अुसके आम तौर पर स्वीकार किये जानेकी अधिक संभावना है।...दोनों विचारोंके लोग मुझे अुतने ही गलत मालूम होते हैं, जितने अिस विचारके लोग कि वैज्ञानिक और धार्मिक भावनामें बुनियादी फर्क है।

www.vinoba.in

लेकिन अिन दोनोंके बीच सहयोगकी जरूरत है, संघर्षकी नहीं; क्योंकि नीतिशास्त्रके सिद्धान्तोंकी अभिव्यक्ति और प्रयोगके लिअे विज्ञानका अुपयोग किया जा सकता है। . . ."

लेकिन प्रो० हिल तर्क करते हैं:

"विज्ञानका ही दुरुपयोग नहीं होता। स्वतंत्रता भी स्वच्छंदताको जन्म दे सकती है, धर्मका अुपयोग भी लोगोंके आवेगोंको अुभाड़नेमें किया जा सकता है, क़ानूनोंका भी अन्याय या अपराधके बचावमें दुरुपयोग किया जा सकता है।* अगर वैज्ञानिकोंको अपने अन्तःकरणकी जांच करनेकी जरूरत महसूस होती है, तो यह अच्छा ही है; लेकिन अुन्हें यह नहीं मान लेना चाहिये कि अिस विषयमें वे अकेले हैं।"

अन्तमें वे कहते हैं:

"यह सच है कि वैज्ञानिक शोधने मनुष्य-जातिके लिअे अभूतपूर्व कल्याण या अपार हानिकी संभावना पैदा कर दी है; लेकिन अुसका अुपयोग अन्तमें सम्पूर्ण मानव-समाजके नैतिक निर्णयों पर निर्भर करता है। अब शोध या खोजकी प्रक्रियाको अुलटना सर्वथा असम्भव है। वह निश्चित रूपसे आगे ही बढ़ेगी। अुसके सही अुपयोगका रास्ता दिखानेमें मदद करना यह विज्ञानकी दुविधा नहीं है, बल्कि भले नागरिकोंका पवित्र और अनिवार्य कर्तव्य है।"

प्रो० हिलका यह रुख कि विज्ञानका नीतिसे कोअी सीधा सम्बन्ध नहीं, प्रीतिजनक नहीं है। क्या मनुष्यके हर कार्यके साथ नैतिक अर्थ भी नहीं जुड़ा होता? क्या विज्ञान नीतिशास्त्रसे परे है? क्या वैज्ञानिक शोध निरुद्देश्य या निरपेक्ष जांचका या निर्दोष अथवा निरर्थक कुतूहलका परिणाम है? क्या वह हमेशा आकस्मिक घटना ही होती है? संक्षेपमें, क्या वैज्ञानिक प्रवृत्तिके भी नीति-सम्बन्धी नियम नहीं होने चाहियें? और अुसे अेक हकीकत ही मान लें, तो भी क्या मूल्यकी दृष्टिसे अुसमें काअी अर्थ नहीं होता? प्रो० हिलने प्रश्नके अिस पहलूकी चर्चा करनेके बजाय अुसे वहीं छोड़ दिया। सर जोसिया ओल्डफील्डने अिसका बीड़ा अुठाया और 'अेन्टी-विविसेक्शनिस्ट' नामक पत्रके नवम्बर-दिसम्बर, १९५२ के अंकमें अिसका नीचे लिखा अुत्तर दिया:

"प्रो० हिलने ३ सितम्बर, १९५२ को ब्रिटिश अेसोसियेशनके सामने दिये गये अपने अध्यक्षीय भाषणमें यह बात स्वीकार की कि अुपयोगितावाद वैज्ञानिक जीवनका अंतिम आधार नहीं है और वैज्ञानिक जगतको यह सही चेतावनी दी कि अुसे नैतिक समस्या पर भी विचार करना चाहिये।

"वे अिस नतीजे पर पहुंचे कि विज्ञानके लिअे केवल यही कहना काफी नहीं है कि अमुक वस्तु व्यावहारिक है, लाभप्रद है या समस्याका हल है; लेकिन विज्ञानको यह स्वीकार करना चाहिये कि अुसका सबसे महत्त्वपूर्ण आधार नैतिक सिद्धान्तों पर है। और अिसलिअे तब तक कोअी वैज्ञानिक प्रगति नहीं हो सकती, जब तक हम यह महसूस नहीं करते कि अैसी प्रगतिका स्वरूप नैतिक होना चाहिये।

"प्रो० हिलने ठीक ही कहा है कि 'सभ्य और शिष्ट मानवताकी सारी प्रेरणायें, धर्मके सारे सिद्धान्त और चिकित्साकी सारी परम्परायें अिस बात पर जोर देती हैं कि दुःख और कष्ट दूर किया जाय।'

"अिसलिअे हमें अिस प्रश्नका अुत्तर देना होगा: क्या हम दुःखको दूर करनेके बहाने समाजको और दुःखी बनायेंगे? जो बुनियाद डाली गअी है वह समझदारीभरी और सही है, लेकिन जब अुसे वास्तविक जीवन पर लागू किया जाता है, तब हमें पूछना चाहिये कि अुसका क्या अर्थ किया जाय।

"जो लोग विज्ञानकी कोअी खास शाखाओंका अध्ययन और प्रयोग करना चाहते हैं, अुन्हें देर-अबेर अिस समस्याका सामना करना पड़ता है: क्या हम ज्ञान प्राप्त करनेके लिअे दूसरोंको कष्ट और पीड़ा पहुंचायेंगे, या हम यह महसूस करेंगे कि वही ज्ञान प्राप्त करने योग्य है, जो नैतिकताके आधार पर प्राप्त किया जाय? हममें से जो लोग विज्ञान शब्दके अूंचेसे अूंचे अर्थमें वैज्ञानिक बनना चाहते हैं, अुन्हें अिस समस्याका सामना करना चाहिये, जिसकी प्रो० हिलने अुपेक्षा कर दी है।

"हम यहां अेक प्रत्यक्ष अुदाहरण लें। अिस बातका पता लगाना अेक बड़े महत्त्वकी वैज्ञानिक समस्या है कि पानीके साथ या पानीके बिना हर तरहके पोषणके अभावमें मनुष्य या पशुमें जीवन कब तक टिकेगा। क्या अिस प्रश्नका अुत्तर पानेके लिअे विज्ञानका यह कहना अुचित होगा कि वह १०० विभिन्न पशुओंको प्रयोगके लिअे ले, अुन्हें कठोर स्थितिमें रखे और धीरे-धीरे भूखों मार डाले तथा बादमें अिस प्रयोगके नतीजेसे प्रश्नका अुत्तर निकाले? विज्ञानके विद्यार्थीके नाते मैं व्यक्तिगत रूपसे किसी वैज्ञानिक प्रश्नका अुत्तर पानेके लिअे किसी पशुको प्रयोगके लिअे चुनने और कष्ट दे देकर भूखों मार डालनेसे अिनकार करता हूं। अिस प्रयोगमें विज्ञानके अेक दर्जन विद्यार्थियोंमें से हरअेक विद्यार्थी अपनी जांचके लिअे बीसों जानवर चुनेगा और अुन्हें धीरे-धीरे भूखसे मार डालेगा और अुनमें से हरअेक भिन्न-भिन्न नतीजों पर पहुंचेगा। अिस बातको बिलकुल छोड़ दें, तो भी मैं कहूंगा कि मानवताके नियमोंको भूलना और यह मानना कि अुपयोगितावादी अुत्तर ही स्थायी महत्त्वके हैं, अवैज्ञानिक है। मुझे लगता है कि प्रो० हिलको अिस गहरी नैतिक समस्याका अुत्तर देना चाहिये था।

"जहां अनेक कार्यों द्वारा नैतिकताकी प्रगति और नैतिक विकासमें हस्तक्षेप किया जायगा, वहां यह कह कर अुन कार्योंको अुचित नहीं ठहराया जा सकता कि वे विज्ञानके अध्ययन और परीक्षाके लिअे किये जाते हैं।

"हम जानवरों पर किये जानेवाले निर्दय प्रयोगोंका विरोध अिस आधार पर करते हैं कि कोअी अुपयोगितावादी अुत्तर पानेके लिअे नैतिक कानूनको तोड़ना अवैज्ञानिक है। मैं आशा करता हूं कि प्रो० हिल अपने सभापतित्वके अेक वर्षमें अिस महान समस्याके हलका प्रयत्न करेंगे, ताकि दुनिया अेक प्रमुख वैज्ञानिकका निश्चित मत जान सके।

"धर्मशास्त्रके विद्यार्थियोंने अीश्वर और विश्वका अर्थ जानने-समझनेके लिअे जो खोज की है, अुसे मैं हमेशा अूंचीसे अूंची मानता रहा हूं; और वैज्ञानिक तथा अवैज्ञानिक सिद्धान्तोंका यह फर्क ही जगत और अुसके विकासके दैवी और दानवी अर्थका भेद पैदा करता है।"

बेशक, आजकी दुनियाके लिअे यह जरूरी है कि विज्ञानका अुपयोग भी मानव-जगतका अुदात्त हित साधनेमें किया जाय; ज्ञान और विद्वत्ताके क्षेत्रमें अुसे किसी तरह विशेषाधिकारवाली प्रवृत्ति नहीं माना जा सकता। जैसा कि अेडिनबराके ड्यूकने पूछा था, "अगर मनुष्य जिन्दा न रहे, तो विज्ञानका क्या अुपयोग है?"

२०-५-'५३ **मगनभाअी देसाअी**

(अंग्रेजीसे)

* लेकिन स्वच्छंदता स्वतंत्रता नहीं है, आवेग धर्म नहीं हैं और अन्याय या अपराध कानून नहीं हैं। जिस क्षण अुनका दुरुपयोग और पतन होता है, अुसी क्षण वे कानून, स्वतंत्रता या धर्म नहीं रह जाते। लेकिन विज्ञानको यह बात लागू नहीं होती।

www.vinoba.in

## आधुनिक सभ्यता और अीर्षा-द्वेष

अेक भाअीके पत्रमें से दिया जा रहा यह अुद्धरण दिलचस्प तो है ही, लेकिन आधुनिक सभ्यताने लोगोंमें जिस विशेष मनोदशाको जन्म दिया है, अुसकी दृष्टिसे भी बहुत सूचक है। वे लिखते हैं:—

"'हम तिब्बत-निवासी' (We Tibetans) नामकी अेक पुस्तकमें, जिसकी लेखिका थो रा मा नामकी अेक तिब्बती महिला हैं—श्री थो रा माने श्री किंग नामके अेक अंग्रेजसे शादी की है; अैसी शादी करनेवाली वे पहली तिब्बती स्त्री हैं—लेखिकाने अिस युद्धके पहले कहा था:

'हम तिब्बत-निवासियोंके पास मोटर या रेडियो आदि नहीं हैं, और अिसका हमें बड़ा सुख है। क्योंकि अगर ये वस्तुअें हमारे देशमें आ जायं, तो वे कुछके पास होंगी और दूसरोंके पास नहीं होंगी। अिसलिअे लोगोंमें अीर्षा-द्वेष बढ़ेगा और झगड़े होंगे। अभी हमारे यहां अैसी कोअी समस्या नहीं है। तिब्बतका भिखारी भी घोड़े या याककी सवारीका मजा ले सकता है।'"

आधुनिक सभ्यताका लक्ष्य साधारण अुपभोगकी वस्तुओंका बन सके अुतना अधिक अुत्पादन करके जीवन-मान बढ़ाना है। भौतिक और आर्थिक विज्ञान अुसे अिस लक्ष्यकी सिद्धिमें अुत्साहपूर्वक मदद करते हैं। लेकिन अुन्होंने अभी तक अुचित वितरणकी व्यवस्था करनेकी कोअी गंभीर कोशिश नहीं की है। वितरण अभी तक मुख्यतया वैयक्तिक सम्पत्तिके आधार पर पैसेके जरिये ही हो रहा है—जिसके पास पैसा है, वह अुन्हें खरीद सकता है, जिसके पास नहीं है वह अुनके बिना रह जाता है। जीवन-मान बढ़ानेके अिस कार्यमें वह पूर्वापरका—पहले क्या करना है और बादमें क्या करना है, अिस बातका भी विचार नहीं करता, निर्णय करना तो दूर रहा। सब लोग अपना जीवन-मान अेक साथ तो नहीं अुठा सकते, अुन्हें अिसके लिअे समान सुविधा और अवसर नहीं मिलता। अिसलिअे अुच्चतर जीवन-मानके लिअे होनेवाली अिस प्रतियोगिताके साथ-साथ लोगोंके मनमें अीर्षा-द्वेषका भी भाव है। अैसा होता है मानो कअी लोगोंको बुलाया जाता हो, पर विजय अिने-गिने मुट्ठीभर लोगोंको ही मिलती हो और तब भी अिस प्रतियोगिताका अन्त नहीं होता।

अिस अवस्थाके कारण समाजके मानसमें कअी गांठें पड़ गअी हैं और समाजकी रचनाका जो रूप हो गया है अुसमें लोगोंको बड़ी परेशानी महसूस होती है। आधुनिक सभ्यताके समक्ष आज यह अेक अुग्र प्रश्न है।

गांधीजीने सर्वोदय-सिद्धान्तका प्रतिपादन करके अिस प्रश्नका हल बताया था। सर्वोदय-सिद्धान्तके अनुसार अगर अन्त्योदय सबसे पहले साधा जाय, तो सर्वोदय हो जाता है, यानी सबसे ज्यादा पिछड़े हुअे लोगोंका जीवन अुन्नत बनानेका प्रयत्न सबसे पहले होना चाहिये। पूंजीवादी समाज-रचना, जिसका आधार पैसा और यन्त्रकी अर्थ-व्यवस्था पर होता है, अिस बातको स्वीकार नहीं कर सकती और अिसका फल स्थायी अीर्षा-द्वेष, दाहक असंतोष और अुससे अुत्पन्न मानसिक असंतुलन, मानवीय और आध्यात्मिक मूल्योंके प्रति लापरवाही आदि होता है। और ये सब मिलकर हमें विफलता और युद्धके रास्ते ले जाते हैं। पश्चिमी मनोवैज्ञानिक खोजने अभी अिन गंभीर सवालों पर काफी ध्यान नहीं दिया है; अिस बातकी बहुत जरूरत है कि वे अिन पर ध्यान दें। कम-से-कम हम भारतवासियोंको चाहिये कि हम पश्चिमके ढंगकी नकल न करें और अुसने जिन मूल्योंका प्रचार कर रखा है अुनकी खुद गहराअीसे जांच करें तथा अपने लिअे अपनी शान्ति और सर्वोदयकी जीवन-पद्धति ही चुनें।

१२-६-'५३ मगनभाअी देसाअी

(अंग्रेजीसे)

---

## भूदान-प्राप्ति

[२० जून, १९५३ तकका हविर्भाग]

| क्रमांक | प्रांतका नाम | कुल प्राप्ति |
|---|---|---|
| १. | असम | १,३१३ |
| २. | आंध्र | ७,०९७ |
| ३. | अुत्कल | ७,५३५ |
| ४. | अुत्तरप्रदेश | ४,७९,२१८ |
| ५. | कर्नाटक | ६७३ |
| ६. | केरल | ५,८०० |
| ७. | गुजरात | ५,५०१ |
| ८. | तामिलनाड | ८,४९८ |
| ९. | दिल्ली | १,१२४ |
| १०. | पंजाब तथा पेप्सु | १,७१९ |
| ११. | बंगाल | २०२ |
| १२. | बम्बअी नगर | — |
| १३. | बिहार | ७,८७,२९२ |
| १४. | मध्यप्रदेश | ३१,००५ |
| १५. | मध्यभारत | २,४९१ |
| १६. | महाराष्ट्र | ७,८७१ |
| १७. | मैसूर | ६९४ |
| १८. | राजस्थान | २३,५९७ |
| १९. | विंध्यप्रदेश | २,३८२ |
| २०. | सौराष्ट्र | ३,००० |
| २१. | हिमाचल प्रदेश | १,२०६ |
| २२. | हैदराबाद | ५५,८७० |
| | | कुल १.४,३४,०८८ |
| | कुल वितरित भूमि | २९,०८० |

कृष्णराज

दफ्तर-मंत्री, सर्व-सेवा-संघ, सेवाग्राम

---

विषय-सूची


| विषय | | पृष्ठ |
|---|---|---|
| डॉ० श्यामाप्रसाद मुकर्जी | मगनभाअी देसाअी | १३७ |
| सज्जनताकी जीत निश्चित है | नि० दे० | १३७ |
| तीसरा काम | मगनभाअी देसाअी | १४० |
| मशीन और बेकारी | मगनभाअी देसाअी | १४१ |
| विज्ञानके लिअे नैतिक समस्या | मगनभाअी देसाअी | १४२ |
| आधुनिक सभ्यता और अीर्षा-द्वेष | मगनभाअी देसाअी | १४४ |
| टिप्पणियां : | | |
| हरिजनोंके लिअे मकान | श्रीकृष्णदास जाजू | १३८ |
| "बेचारा घी" | पो० छ० शेठ | १३८ |
| युद्धका मुख्य कारण | वा० गो० दे० | १३८ |
| श्रम-यज्ञ | कृष्णराज | १३९ |
| कुष्ठ-कामके संचालकोंकी तालीम | मनोहर दिवाण | १३९ |
| हिन्दुस्तानी तालीमी संघके नये प्रकाशन | | १३९ |
| भूदान-प्राप्ति | कृष्णराज | १४४ |


www.vinoba.in